ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218
PP. NO.- 223-227
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-I, Issues-X YEAR- June -2018

# शिक्षा में कला की भूमिका एवं प्रासंगिक्ता

**1. अंजनी कुमार, 2. डॉ0 सुस्मिता लख्यानी**
शोध अध्येता, 2. सहायक आचार्य
सहायक आचार्य, केंद्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

***प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से कला शिक्षा के महत्व को बताने का प्रयत्न किया गया है। वर्तमान में कला शिक्षा के नाम पर विद्यालय में जो हो रहा है उनपर भी प्रकाश डाला गया है। संक्षेप में यह भी बताने की कोशिश की गई है कि हमारे शिक्षार्थी, शिक्षक एवं अभिभावक का नजरिया इस विषय को लेकर कैसा है।***

***इस शोध पत्र को लिखने के लिए शोध पत्र, शोध ग्रंथ, विषय संबंधी कई साहित्य, एन.सी.एफ एवं शिक्षा से संबंधित गठित प्रमुख सरकारी कमीशन के रिपोर्ट की भी सहायता ली गई है। आवश्यकतानुसार क्षेत्र अध्ययन भी किया गया है और विषय के जरूरत के अनुरूप प्रश्नावली अनुसूची प्रेक्षण तथा साक्षात्कार जैसे शोध यंत्रों को भी मदद इस कार्य के लिए ली गई है।***

**कला एवं कला शिक्षा : अवधारणा, महत्व और दार्शनिक आधार–** जैसाकि हम जानते हैं कला मानव की कल्पना, रचनात्मकता तथा उसके भावनाओं की अभिव्यक्ति है। कला हमेशा से ही मानव के लिए प्रेरणा का स्रोत रही है। इसने अवसाद तथा निराशा के समय में भी हमें सांत्वना दी है। मानव–हृदय की अनुभूति की अभिव्यक्ति या प्रदर्शन के माध्यम को कला कहा जाता है जहाँ रचनात्मकता अभिरूचि को साथ लेकर चलती है। प्राचीन काल से ही मानव तनाव भय एवं खतरे से मुक्ति पाने के लिए कला का सहारा लेता रहा है। उसने अपने द्वारा किए गए हरेक प्रकार के अनुभव को भी कला के माध्यम से व्यक्त किया है। भीमबेटका, अजंता तथा ऐलोरा की गुफाएँ, मोहनजोदड़ो से प्राप्त कई कलात्मक एवं पुरातात्विक महत्त्व के अवशेष स्वयंसिद्ध प्रमाण हैं, जो उपरोक्त कथन की पुष्टि करते हैं।

समय व्यतीत होने के साथ–साथ कला जीवन की एक आवश्यकता बन गई है। वर्तमान में कला हमारे जीवन के हरेक पहलू से जुड़ गई है। कला आज मात्र कागज और मुर्तियों में नहीं सिमटी हुई है, बल्कि इसके नित नवीन प्रयोग को हम कई जगह देख सकते हैं, जो आज लाखों लोगों के आजीविका का प्रमुख साधन बना हुआ है। वर्तमान में परिधान निर्माण, आभूषण निर्माण, जूते–चप्पलों के निर्माण, गृह निर्माण एवं साज–सज्जा, रूप सज्जा, केश सज्जा, तथा अनंत संभावनाओं से पूरित बाजार का विज्ञापन जगत आदि कई कला के उभरते हुए विषय क्षेत्र हैं जो लोकप्रिय हो रहे हैं। इन सब के अतिरिक्त शिक्षा, संस्कृति तथा मनोरंजन जगत में भी कला शिक्षण की कई संभावनाएँ हमेशा से मौजूद रही है। कला मानव जीवन को संतुलित करने का कार्य करती है। यह जीवन के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों पक्षों की बात करती है तथा इसके माध्यम से यह अपने रसिकों को आनंद की अनुभूति कराती है। कई प्राचीन भारतीय साहित्य में कला की विशद चर्चा की गई हैं संस्कृत के विद्वान भर्तृहरि के कथन के अनुसार –

**साहित्य संगीत कला विहीनः।**
**साक्षात पशु पुच्छ विषाण हीनः।।** (भर्तृहरि, लगभग 5वीं शताब्दी/2007, श्लोक 12)

अर्थात्, साहित्य, संगीत एवं कला से हीन मनुष्य बिना सींग और पूंछ के जानवर के समान होता है। वात्स्यायन के अनुसार, ***''कलानां ग्रहणादेव सौभाग्यमुपजायते''***। अर्थात् कलाओं को जान लेने से मनुष्य को सौभाग्य की प्राप्ति होती है। कला शिक्षा का दर्शन एक आदर्श तथा शाश्वत रूप से पर्याप्त दर्शन है। इसकी नींव कला, मनुष्य एवं समाज के परस्पर संबंध पर रखी गई है। कला का जन्म परमानंद के रूप में हुआ और वह लोगों को हमेशा आकर्षित करती रही है। जहाँ सौंदर्य है, वहाँ कला के कुछ न कुछ तत्व सदैव विद्यमान होते हैं और जहाँ कला है, वहाँ सौंदर्य होता ही है।

''कला'' शब्द व्युत्पत्ति की दृष्टि से एक आनंदविधायिनी प्रकिया का सूचक है– 'कं (आनंद) लाति इति कला' (गुप्त, 1997)।

सामान्य रूप में ऐसा भी माना जाता है कि कला वह शक्ति है, जो मनुष्य के स्थिर जड़वत चित्त में स्पंदन, अनुगूंज तथा अनुरणन पैदा करके उसे गतिमान बना देती है।

प्रत्येक राष्ट्र अपने समर्थ सर्जना शक्ति से अपने इतिहास और भविष्य के लिए कलात्मक शक्ति स्रोत का निर्माण एवं प्रचार–प्रसार करता है। कला स्वयं में नियामक एवं नियंता दोनों ही है। इसके इसी गुण के कारण हरेक कलात्मक कृति अपने आप में अनुशासित संतुलित तथा अद्वितीय होती है। कला की व्याख्या तथा उसका मूल्यांकन हम जिस भी स्तर पर करते हैं, वे सारे गुण, मूल्य एवं अनुशासन एक कृति में आने से पूर्व कलाकार के अंदर आता है। अतः ऐसा माना जा सकता है कि कला पहले अपने सर्जक को साधती है, फिर सर्जक अपनी कृति के माध्यम से कला को साधने का प्रयत्न करता है।

कला एवं उसकी महत्ता को ऐतरेय ब्राह्मण में इस प्रकार वर्णित किया गया है, "दिव्य कलाएँ वास्तव में कला के रूप में प्रशंसित की जाती है। सभी मानवीय कलाएँ जैसे पीतल का काम, पोशाक, सोने का काम और हाथी, खच्चर, रथ आदि खिलौने दिव्य कला के समान ही प्रतीत होते हैं। इस तरह के कौशलपूर्ण सभी कार्य को कला माना जाना चाहिए। जिस आत्म सुधार के द्वारा यजमान छंदोमय हो जाते हैं, वह आत्म सुधार भी इन कलाओं के अन्तर्गत ही आता है। यहाँ तक कि संतान उत्पन्न करना भी ऐसी ही कला है" (राय, 1978)।

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है, ***'यैद्वप्रतिरूपम तच्छिलपम्'*** अर्थात् प्रकृति की जो भी प्रतिच्छवि है वह सभी कला है (राय, 1978).।

कला स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों प्रकार के तत्व से पूरित है। यह देखने या जानने वाले पर निर्भर करता है कि वह इसे किस रूप में समझना चाहता है। मुण्डकोपनिषद् में शिक्षण के षडंग की चर्चा की गई है जो इस प्रकार है–

**1. शिक्षा 2. कल्प 3. व्याकरण 4. निरुक्त 5. छंदस् 6. ज्योतिष**

इसमें से 5वां भाग जिसे छंदस् कहा गया है, का संबंध विविध प्रकार की कलाओं से है। (विनोबा, 2010) अर्थात् प्राचीन काल में भी कला शिक्षा के एक प्रमुख अंग के रूप में प्रतिष्ठित रही है।

आचार्य विनोबा भावे की पुस्तक 'शिक्षण विचार' (2010) में एक महत्वपूर्ण शीर्षक 'शिल्प–कला का दृष्टांत' के अन्तर्गत यह बात कही गई है, कि कला पूर्णता को जन्म देती है, जो वास्तव में राष्ट्रनिर्माण में सहायक सिद्ध होती है।

इसी प्रकार गिजुभाई की पुस्तक मोंटेसरी पद्धति (2009) में इस बात का उल्लेख मिलता है, कि कला के माध्यम से व्यक्ति की आँखें और हाथ सधते हैं तथा एकाग्रता का विकास होता है। जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने अपूर्व बौद्धिक शक्ति का प्रदर्शन करने में सक्षम हो जाता है। चित्र बनाने के साथ–साथ बालक चित्रों को लिखने भी लगता है तथा उसकी तरह–तरह से व्याख्या करने में भी सक्षम होने लगता है। इस प्रकार चित्रकला से निबंध लेखन की प्रवृत्ति का ज्ञान भी होता है।

चित्रों के माध्यम से व्यक्ति प्रकृति एवं प्राकृतिक विज्ञान को भी बहुत करीब से समझ पाता है। रीड (1945) ने कला के संदर्भ में व्यक्ति निष्ठ गुणों के प्रकट करने पर जोर देते हुए कहा है कि "कला के माध्यम से व्यक्तिगण मनोविज्ञान को समझा जा सकता है और व्यक्ति के विकास में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को सूनिश्चित किया जा सकता है। लोवेनफेल्ड (1952) कला को 'स्व बोध' एवं 'स्व समायोजन' से जोड़कर देखते है तो वहीं सिजेक (वियोला में उद्धृत, 1936) कला को 'मुक्त अभिव्यक्ति उपागम' के रूप में परिभाषित करते हैं। कला की व्यापकता और इसकी बहुआयामी महत्ता की वजह से यह हमेशा से ही शिक्षा के एक प्रमुख अंग के रूप में देखी जाती रही है।

वास्तव में कला–शिक्षा के माध्यम से शिक्षार्थी उस गुण से परिपूर्ण होते हैं, जो उन्हें स्वयं के अनुभव को सहजता एवं आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत करने में सहयोग करती है। व्यक्ति दब्बू या नकलची बनने के बजाय एक ऐसे नवीन रचनात्मक मार्ग की ओर अग्रसर होता है, जहाँ वह वास्तविकता, नवीनता एवं मौलिकता जैसे तथ्यों को प्रदर्शित करने में सक्षम होने लगता है। वह आत्मविश्वास का एक ऐसा आनंद महसूस करने लगता है, जिससे वह खुद को बेकार महसूस नहीं करता। उसने कुछ नया किया है और उसका अपना एक अलग अस्तित्व है।

**कलाः सृजनात्मकता की ओर–** कला गतिविधियों पर आधारित एक अनुभवपूर्ण विषय है। इसमें सृजनात्मक प्रक्रिया के माध्यम से प्रेक्षण, कल्पना एवं दृष्टिकोण के विकास का व्यापक अवसर प्राप्त होता है। प्रत्येक बच्चे में संभावनाओं और भावनाओं का विशाल सैलाब उमड़ता रहता है, जिन्हें बच्चों की आंतरिक दुनिया से बाहर निकालने की प्रक्रिया में कला–शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

वॉयर (1994) का मानना है "कि हमें अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कला की जरूरत होती है, क्योंकि भावनाओं को शब्दों के बजाए हम कला के माध्यम से उन्नत तरीके से व्यक्त कर सकते हैं। कला के द्वारा शिक्षार्थियों में सृजनात्मकता को विकसित किया जा सकता है और इससे शैक्षिक जीवन को भी समायोजित किया जा सकता है। कला के माध्यम से निराशित जीवन में आशा का दीप जलाया जा सकता है एवं समाज के निर्माण के लिए आनेवाली पीढ़ियों के बीच भी एक भावनात्मक जुड़ाव कायम किया जा सकता है। समाज को जोड़ने में एवं इसके उत्थान में कला की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है।"

कैलौस्ट गुलबेनकियन फाउण्डेशन (1982) के अनुसार कला–शिक्षा बच्चों में निम्न दक्षता का विकास करती है–

1) बहुआयामी बुद्धि का विकास
2) सृजनात्मक क्रिया एवं विचार का विकास
3) अनुभव एवं संवेदना का विकास
4) विविध प्रकार के मूल्यों का विकास
5) सांस्कृतिक बदलाव एवं उसके अंतरों की समझ
6) शारीरिक मानसिक दक्षता का विकास

किसी भी समाज में कला का होना उसके सांस्कृतिक रूप से धनी होने का प्रमाण है। वैश्विक स्वीकृति यह है कि कला सामाजिक समन्वय को बढ़ाती है तथा व्यक्ति के स्वाभिमान की भी वृद्धि करती है। आइंस्टीन एवं सी.वी. रमण जैसे प्रसिद्ध वैज्ञानिक तो कला को विज्ञान के सर्वश्रेष्ठ रूप के तौर पर देखते हैं, क्योंकि कला जिस कल्पनाशीलता, मौलिकता एवं नवीनता से लवरेज रहती है, उसी कल्पनाशीलता एवं नवीनता की सहायता से विज्ञान एवं वैज्ञानिक भी तैयार होते हुए पाए गए हैं। अतः वैज्ञानिको का कलाकार एवं कलाकार को वैज्ञानिक मानने मे संदेह नहीं होना चाहिए।

कला शिक्षा की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए एन.सी.एफ. 2005 में कहा गया है कि अगर अपनी अनूठी सांस्कृतिक पहचान को उसकी विविधता एवं समृद्धता सहित बचाए रखना है तो औपचारिक शिक्षा में कला शिक्षा को तत्काल समेकित करना होगा, साथ ही दृश्य एवं प्रदर्शन दोनों ही कलाओं को पाठ्यचर्या में शिक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाए जाने की जरूरत है।

इन सब से इधर यदि हम महान कलाविद् एवं शिक्षाविद् प्रसाद जी की पुस्तक– शिक्षा का वाहनः कला (2009) को देखे तो हम पाते हैं कि इसके माध्यम से उन्होंने ऐसी बात कही है जो वास्तव में आज की जरूरत है। उनका मानना है कि आज वशेष तौर पर कला शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है, क्योंकि आदमी का ह्रदय इतना संकुचित हो गया है कि पेड़–पौधे आदि की बात तो छोड़ दे, उसे अपने पड़ोसी मानव के लिए भी सच्ची संवेदना नहीं रह गई है।

इस स्वधर्म युग में शिक्षा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि उससे व्यक्ति कुछ और चीज सीखे या न सीखे उसे साथियों, सह जीवियों के साथ गहरी संवेदना की अनुभूति तो अवश्य ही हो। कला शिक्षा इस काम को बहुत आसानी से करती है। कलाकार का मन कोमल हो जाता है कि वह सजीव एवं निर्जीव सभी के लिए संवेदना एवं स्नेह रखता है।"

**राष्ट्रीय पाठयचर्यो एवं शिक्षा नीतियों में कला शिक्षा–** कला की इतनी महत्ता एवं व्यापकता के बाद भी क्या, यह वर्तमान में एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में हमारे विद्यालय में प्रचलित है? क्या इसके गुण के अनुरूप इसके उतनी तरजीह हमारी शिक्षा व्यवस्था दे पा रही है? विद्यालय एवं अन्य शैक्षिक तंत्र व्यवहारिक रूप में इसकी महत्ता को स्वीकार कर पा रहे हैं? कक्षाओं में इसका स्वरूप कैसा है? विद्यालय समय–सारणी में यह विषय कहाँ स्थान ले पा रहा है?

आदि कई ऐसे सवाल है जिसको जानने की आतुरता हमारे मन में व्याप्त है, क्योंकि जिस कला शिक्षा में इतने सारे गुण निहित हैं, वास्तव में उसे हमारी शैक्षिक व्यवस्था में उच्च सम्मान मिलना चाहिए तथा मुख्य विषय के रूप में उसके अधिगम एवं मूल्यांकन को भी स्थान देना चाहिए।

अपने इसी जिज्ञासा भाव को पूरा करने के लिए सर्वप्रथम कुछ दस्तावेज एवं लेखों का अध्ययन करना शुरू किया गया और समयानुरूप उत्तरी दिल्ली के छः सरकारी विद्यालय में क्षेत्र अध्ययन के माध्यम से कला शिक्षा के प्रचलित स्वरूप के संदर्भ में प्रारंभिक समझ विकसित करी गई। सर्वप्रथम इसके संबंध में जो लिखित साक्ष्य मिले एकत्रित करे गए पुनः विद्यालय में वास्तविक स्थिति का अवलोकन किया गया। शिक्षा सुधार को लेकर बनी कोठारी कमीशन (1964–66) ने माना है कि कला शिक्षा एक महत्वपूर्ण विषय होने के बावजूद आज भी अवहेलनापूर्ण स्थिति में है। 1966 में कला शिक्षा को लेकर एन.सी.ई.आर.टी. ने के.जी. सैयद्देन की अध्यक्षता में एक कमिटी गठित की। जिसके अनुशंसा में यह कहा गया कि कला शिक्षा वास्तव में उपेक्षित रही है और इससे संबंधित शिक्षक की विषय प्रशिक्षण की आवश्यकता है तथा इसको माध्यमिक स्तर तक विषय के रूप में लागू किया जाना चाहिए।

एम.बी.बुच के पाँचवें शैक्षिक शोध सर्वे (1988–92) के पृष्ठ संख्या 404 के तृतीय गद्यांश में कला शिक्षा से संबंधित यह कहा गया है कि कला एवं सौंदर्यशास्त्र के महत्व को अधिकांश शिक्षाविद् स्वीकारते हैं किन्तु व्यवहारिक रूप में इसकी स्थिति असंतोषजनक है। एन.सी.एफ. (2005) के बिन्दुं संख्या 3.5 के अन्तर्गत जिन वास्तविकताओं का उल्लेख किया गया है वह वास्तव में विचारणीय है। यहाँ उल्लेखित है कि शिक्षा व्यवस्था में कला के महत्व पर बार बार चर्चा हुई है और इसकी अनुशंसा की जाती रही है, लेकिन इस दिशा में कोई खास प्रगति नहीं हुई है... कला अध्ययन की दिशा में प्रोत्साहित किए जाने की बजाय हमारी शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों और सृजनात्मक दिमागों को कलाओं को अपनाने से हतोत्साहित करती है। हमारी शिक्षा व्यवस्था कला को "उपयोगी शौक" या मनोरंजक गतिविधि मात्र मानती है। कला बस स्कूल के स्थापना दिवस, वार्षिक दिवस, गणतंत्र दिवस या स्कूल निरीक्षण के दौर के अवसर पर प्रदर्शन की वस्तु बनकर रह गई है। इस अवसरों के पहले या बाद स्कूल में विद्यार्थियों को कला से दूर ही रखा जाता है और विद्यार्थियों को उन्हीं विषयों की ओर धकेला जाता है, जिन्हें पढ़ना परीक्षा की दृष्टि से अधिक उपयोगी होती है।

एन.सी.एफ. (2005) की उपरोक्त बात कहीं इस ओर भी इशारा कर रही है कि कला शिक्षा आज एक महत्वहीन विषय इसलिए भी है, क्योंकि वह परीक्षा की पंक्ति में शामिल मुख्य विषयों से अलग एक 'टाइमपास' विषय के रूप में हमारे विद्यालयों में प्रचलित है और इसके मूल्यांकन संबंधी कोई महत्वपूर्ण व्यवस्था अस्तित्व में नहीं है।

जाट (2015) ने अपने लेख 'दा इर्म्पोटेंस ऑफ आर्ट एजुकेशन' में एक बात पर जोर देते हुए कहा है कि यदि हमारी शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करना है तो हमारे पाठ्यक्रम में कला का स्थान अन्य पढ़ाई लिखई के विषयों के समान क्यों नहीं है? कला को हमारी व्यवस्था ने 'फुरसत के क्षणों का क्रियाकलाप' के रूप में ढाल दिया है। हमारे बच्चों को विद्यालय में कला एवं सृजनात्मकता के मौके नहीं दिए जाते और न हीं उन्हें कलात्मक वस्तु को निकट से देखने का अवसर दिया जाता है। ऐसी स्थिति के लिए देश का शिक्षित समाज एवं विद्यालय दोनों जिम्मेदार है।"

**कला शिक्षा से संबंधित अनुभवजन्य अध्ययन एवं प्रमुख निष्कर्ष–** उपरोक्त लिखित साक्ष्यों से प्राप्त जानकारी के बाद इसके व्यवहारिक तथ्यों को जानने के उद्देश्य से उ. दिल्ली के छः सरकारी विद्यालयों में से प्रत्येक में तीन–तीन दिन 2 घंटे प्रतिदिन के हिसाब से विवरण लिया गया। छः सरकारी विद्यालय में से दो बालक, दो बालिका एवं दो सह शिक्षा से संबंधित थे। हालांकि विषय की व्यपाक समझ के लिए यह काफी नहीं था, फिर भी कला शिक्षा को लेकर कुछ ऐसे रोचक तथ्य सामने आए जो वास्तव में विचारणीय लगे।

इस कार्य के लिए मुख्य रूप से 5वीं एवं 6ठीं कक्षा के विद्यार्थियों को चुना गया क्योंकि इन कक्षाओं में कला की नियमित कक्षा लगती थी। विषय संबंधित तथ्यों को जानने के उदेश्य से समूह साक्षात्कार, एकल साक्षात्कार, प्रेक्षण एवं प्रश्नावली अनुसूची का सहारा लिया गया उपरोक्त क्रियाकलाप के पश्चात् जो जानकारी मिली वह इस प्रकार है–

इन विद्यालयों के ऐसे कुछ बच्चे जो अपने परिवार या समाज से कशीदाकारी, मुखौटा निर्माण, लोकगीत, काष्ठकला या मूर्तिकला आदि को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सीख रहे थे या सीख चुके थे, उनको न तो विद्यालय और न ही उनके सहपाठी सम्मान के भाव से देखने या उनका उत्साहवर्धन करते थे। वे बस ऐसे शिक्षार्थियों को जरूरत के अनुरूप याद करने या उनके सहपाठी उन्हें मनोरंजक व्यक्ति के रूप में गिनते।

इन सरकारी विद्यालयों के पास शिक्षार्थियों के जाति, धर्म, पारिवारिक आय आदि से संबंधित लेखा जोखा तो था, लेकिन इनमें से किसी भी विद्यालय के पास इस चीज का कोई रिकॉर्ड नहीं था कि विद्यालय का कौन सा शिक्षार्थी किस कला में दक्ष है अथवा उसकी रूचि किस कला या विषय को लेकर है। इस तरह के दस्तावेज विद्यालय स्तर पर शिक्षार्थी अभिभावक वर्ग शिक्षक तथा प्रधानाचार्य के आपसी सहायता से तैयार करवाने चाहिए। ताकि इसकी सहायता से शिक्षार्थियों का मार्गदर्शन किया जा सके और शिक्षार्थी अपने जीवन को एक सही दिशा दे सके।

अधिकांश बच्चों ने यह माना कि उसके द्वारा सीखे गए कलात्मक किया जो उनके घर, संस्कृति अथवा समुदाय में प्रचलित है, उसका विद्यालयी शिक्षा तंत्र से कोई लेना–देना नहीं है। विद्यालयी शिक्षा में प्रचलित कला शिक्षा का ढाँचा उनके अपने अनुभव से बिल्कुल अलग है।

कला की कक्षा के प्रेक्षण के दौरान एक दिन यह देखा कि 5वीं कक्षा का एक छात्र 'अपने मनपसंद फल' शीर्षक के अन्तर्गत 'आम' का चित्र बनाकर अपने कला शिक्षक को दिखा रहा था। शिक्षक ने चित्र देखते ही उसे सवाल करना शुरू कर दिया। शिक्षक– "तुमने इस तरह के पिचके हुए आम को कहाँ देखा है? इसको सही करो, ऊपर से गोल और कोने में थोड़ा सा उभरा हुआ।"

कक्षा के सभी शिक्षार्थी हँसने लगे। छात्र झेंप गया किन्तु बहुत साहस जुटाकर उसने शिक्षक को धीरे से कहा– "सर यह दशहरी आम है इसलिए लंबा और पिचका हुआ है आप जो बोल रहे हो वह तो लंग्ड़ा (आम की प्रजाति) होता है।"

छात्रों की यह बात हमें कला शिक्षण की प्रक्रिया, उसके मूल्यांकन का स्वरूप, कला शिक्षक की गुणवत्ता एवं कला शिक्षण के उदेश्य इन सभी बिन्दूओं पर बारी–बारी से सोचने को मजबूर करती है। शायद कला के इस तरह के स्वरूप की वजह से भी यह विषय उपेक्षा का शिकार होता रहा है क्योंकि इससे बच्चों के अपने अनुभव एवं विद्यालय द्वारा दी जाने वाली कला शिक्षा के अनुभव में एक दुराव सा उत्पन्न होने लगता है, तथा स्वभाविक तरीके से शिक्षार्थी की रूचि विषय को लेकर कमतर सी हाने लगती है।

अधिकांश विद्यालयों में कला शिक्षा के लिए आवंटित समय में मिड–डे मिल (अपराह्न भोजन) को बांटने का कार्य होता था क्योंकि विद्यालय के कुछ जिम्मेदार शिक्षकों का मानना था कि इस अवधि में बच्चे कक्षा में शोर करते हैं इससे बेहतर है कि एक काम निपटा लिया जाए।

शिक्षार्थियों के मध्य यह भी पाया गया कि उनके पास 'कला' के विषय क्षेत्र को लेकर ज्यादा सूचना नहीं थी और अधिकांश शिक्षार्थी एक प्रश्न पर बार–बार आकर अटक रहे थे कि 'आगे इस विषय से हमें क्या फायदा होगा?'

इस तरह के प्रश्न के ऊपर हमारे बौद्धिक समाज और खासकर कला के क्षेत्र से जुड़े हुए उन तमाम लोगों को विचार करने की जरूरत है कि आखिर इतना समृद्ध विषय होते हुए भी क्यों यह विषय आभावग्रस्त रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज करा पा रही है। इसके सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक रूप के साथ ही हमें इसके कियान्वयन के संपूर्ण तरीके पर फिर से सोचने की जरूरत है। आखिर क्या वजह है कि कला शिक्षा आज भी अधिकांशतः हमारे साहित्य एवं सरकारी दस्तावेजों की ही सुंदरता बढ़ा रही है, क्या यही इसका उदेश्य है? यह भी चर्चा का विषय है।

कला एक प्रायोगिक विषय है और इसके साथ भी शायद वैसा ही होना चाहिए जैसा कि अन्य प्रायोगिक विषय के साथ होता है। अर्थात विज्ञान एवं अन्य विषयों को जिसका स्वरूप सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक दोनो है, सबके लिए हरेक विद्यालय में एक–एक कमरा आवंटित था जबकि छः में से सिर्फ एक ही विद्यालय में 'कला कक्ष' पाया गया वह भी 'स्टोर रूम' के रूप में।

छः में से मात्र देा विद्यालय में कला शिक्षक थे और उसमें भी एक विद्यालय में एक अतिथि शिक्षक थे जो अब नहीं आ रहे थे और दूसरे विद्यालय में जो नियमित शिक्षक थे उनके जिम्मे विद्यालय नामांकन एवं मिड–डे मिल का प्रभार था वे पूरे दिन इन्हीं कार्यों में हाथ बँटाते।

मुक्त साक्षत्कार के दौरान यह पाया कि एक बालक विद्यालय और एक सहशिक्षा विद्यालय में अध्ययनरत छात्रों ने 'कला' को स्त्रियोचित विषय की संज्ञाा से संबोधित किया और उनका मानना था कि इस विषय को तो लड़कियाँ ही पढ़ती है या उन्हें अच्छा लगता है, हम तो रफ एंड टफ या चुनौतीपूर्ण विषय में रूचि लेते हैं, जबकि कुछ छात्रों ने यह बताया कि वह विषय में रूचि रखते हैं और आगे भी इसको पढ़ना चाहते हैं, लेकिन उनके अभिभावक उनको वैसे विषय पढ़ने की सलाह देते हैं, जिससे समाज में इज्जत–प्रतिष्ठा भी मिले और अच्छा पैसा भी उसके माध्यम से कमायाा जा सके।

कला शिक्षा के नाम पर विद्यालय में उपलब्ध संसाधन के विषय में जब जानने की कोशिश करी गई तो इनमें से एक विद्यालय प्रबंधन में शामिल शिक्षक ने बात–चीत के माध्यम से विद्यालय में खर्च होने वाले मदों का अनुमानित ब्योरा दिया जो इस प्रकार है

| कम संख्या | मद | खर्च राशि (प्रतिशत में) |
|---|---|---|
| 1. | विज्ञान विषय और प्रयोगशाला पर खर्च | 32 |
| 2. | कम्प्यूटर विज्ञान एवं प्रयोगशाला पर खर्च | 29 |
| 3. | शारीरिक शिक्षा एवं विषय संबंधी खेल सामग्री पर खर्च | 22 |
| 4. | सामाजिक विज्ञान प्रयोगशाला एवं विषय संबंधी अन्य चीजों पर खर्च | 06 |
| 5. | गणित विषय एवं प्रयोगशाला पर खर्च | 06 |
| 6. | कला शिक्षा एवं इससे संबंधित अन्य खर्च | 02 |
| 7. | अन्य | 03 |
| | **कुल** | **100:** |

कला शिक्षा के नाम पर कुल राशि का लगभग 2प्रतिशत खर्च होता है, वह भी वास्तव में कला के लिए नहीं बलिक स्कूल को सजाने एवं विविध प्रकार के सांस्कृतिक एवं मनोरंजक कार्यों के लिए। यहाँ तक कि कभी–कभी शिक्षार्थियों को दिया जाने वाला पुरस्कार भी इसी मद में दर्शा दिया जाता है।

इन तथ्यों के आधार पर मोटे तौर पर यह समझा जा सकता है कि विद्यालय तंत्र के पास कला शिक्षा के लिए आवश्यक संसाधन एवं सुविधा को लेकर कोई मजबूत या जिम्मेदारीपूर्ण निर्णय नहीं है।

**शैक्षिक निहितार्थ, वर्तमान प्रासंगिक्ता एवं निष्कर्ष–** इन विद्यालयों में से किसी भी एक विधालय में न तो कला क्षेत्र से संबंधित महान कलाकारों की तस्वीर दीवार पर टंगी थी (अपवाद– टेगोर को छोड़कर वह भी मात्र दो विद्यालय के प्राचार्य कक्ष में) और न ही कोई महत्वपूर्ण कलाकृति।

इस तरह की चीज भी बच्चों को सीखने के मौके उपलब्ध करवाते हैं लेकिन इसका अभाव स्वाभाविक तौर पर आपसे सीखने या रूचि उत्पनन करने के कुछ मौके छीन सकता है।

विद्यालयों के पुस्तकालय में कला शिक्षा से संबंधित पुस्तकों की कमी देखी गई और विविध प्रकार के कलाकृतियों के प्रिंट रूप का कोई संकलन नहीं पाया गया, जो बच्चों को कला विषयक समझ के अलावा दुनिया के अन्य भागों से उन्हें जोड़ पाते कुछ नया सीखने का उसे अवसर प्रदान कर पाते।

उपरोक्त समझ और प्राप्त जानकारी ने व्यवहारिक रूप से और बहुत करीब से कला शिक्षा को जानने का मौका दिया। इससे विषय से संबंधित कई आयाम को भी समझा गया।

सारांश रूप में वैश्विक समाज एक बहुसांस्कृतिक समाज है जिसे कला अपने कई रूपों के माध्यम से बहुत लंबे समय से आपस में जोड़कर रखती आई है।

कई प्रमुख विद्वानों एवं वैश्विक स्तर की मानक संस्थओं ने माना है कि कला, व्यक्ति के संतुलित व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गार्डनर (1982) ने माना है कि कला के माध्यम से हम उन तमाम चीजों को व्यक्त एवं प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसको भाषा नहीं कर सकती। कला के माध्यम से लोगों में सृजनात्मक विचार उत्पन्न किया जा सकता है। कला उदासी न या निराश व्यक्ति के अंदर सकारात्मक एवं आनंदित करने वाली ऊर्जा को संचारित करने में सक्षम है।

अतः वर्तमान में हम यदि एक व्यवस्थित एवं संतुलित समाज तथा शिक्षा व्यवस्था चाहते है, जहाँ हमारे पास कई सकारात्मक अवसर उपलब्ध हैं और इन अवसरों को हम विश्व कल्याण की भावना से समझना और व्यवहार में उतारना चाहते हैं, तो निश्चय ही कला को हमें अपने प्रचलित शिक्षा तंत्र के मुख्यधारा से जोड़ना होगा।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बधेका, गिजुभाई, (2009)। मोंटेसरी पद्धति (पृ. 207–213), बीकानेरः सर्जना प्रकाशन।
2. बॉयर, ई. एल. (1994, 15 अक्टूबर), लाइफलॉन्ग लर्निंग इन द आर्ट्स (कला में आजीवन अधिगम), वाइटल स्पीचेज ऑफ द डे, 61(1), 15.
3. बुच, एम. बी. (संपा.), (1988–1992), फिफ्थ सर्वे ऑफ एजुकेशनल रिसर्च (पृ. 404, तीसरा अनुच्छेद), नई दिल्लीरू राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद।
4. भर्तृहरि, (2007), नीतिशतकमः हिन्दी व्याख्या सहित (आर. के. शर्मा, अनु.), वाराणसीः चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, (मूल कार्य लगभग 5वीं शताब्दी)
5. गार्डनर, एच. (1982), आर्ट, माइंड एंड ब्रेनः अ कॉग्निटिव अप्रोच टू क्रिएटिविटी, न्यू यॉर्कः बेसिक बुक्स।
6. गुप्त, एन. (2011), संस्कृति के सात सोपान (पृ. 91–133), नई दिल्लीः राधा पब्लिकेशन।
7. जाट, एम. एल. (2015, अप्रैल), द इम्पोर्टेंस ऑफ आर्ट एजुकेशन इन द प्रेजेंट टाइम्स, रिमार्किंग एन एनालाइजेशन।
8. कैलौस्ट गुलबेनकियन फाउंडेशन, (1982), द आर्ट्स इन स्कूल्सः पॉलिसी, प्रोविजन एंड प्रैक्टिस, कैलौस्ट गुलबेनकियन फाउंडेशन।
9. लोवेनफेल्ड, वी. (1952), क्रिएटिव एंड मेंटल ग्रोथ, न्यू यॉर्क, एनवाईः मैकमिलन।
10. विनोबाए (2010, मई), शिक्षण विचार (पृ. 6–17, 42), राजघाट, वाराणसीः सर्व सेवा संघ प्रकाशन।
11. वियोला, डब्ल्यू. (1936), चाइल्ड आर्ट एंड फ्रांज सिजेक. न्यूयॉर्क, एनवाईः रेनल एंड हिचकॉक।
12. प्रसाद, देवी, (2009), शिक्षा का वाहनः कला, नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया।
13. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, (2005), राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005ः कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच पर राष्ट्रीय फोकस समूह का स्थिति पत्र।
14. राय, निहाररंजन, (1978), भारतीय कला का अध्ययन, नई दिल्लीः मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड।
15. रॉबिन्सन, के. (संपा.), (1982), द आर्ट्स इन स्कूल्सः प्रिंसिपल्स, प्रैक्टिस एंड प्रोविजन।
16. रीड, एच. (1945), आर्ट एंड सोसाइटी, लंदनः फैबर एंड फैबर।

*****